Date - 25/10/2024
Time - 10. AM

डॉ मनोज कुमार सिंह
मनोविज्ञान विभाग
महाराजा कॉलेज आरा
P.G 1st Semester
Paper - CC - 2
Advance Social Psychology

Topic :-

सामाजिक मनोविज्ञान का स्वरूप
(Nature of the Social Psychology)

समाज मनोविज्ञान की भिन्न-भिन्न परिभाषाओं की व्याख्या से इतना अवश्य स्पष्ट हो जाता है कि इसका स्वरूप काफी जटिल है। सामाजशास्त्रियों तथा मनोवैज्ञानिकों के आलोक में समाज मनोविज्ञान के स्वरूप के सम्बन्ध में निम्नलिखित बातें उल्लेखनीय हैं-

(क) एक शुद्ध मनोविज्ञान-समाज मनोविज्ञान के स्वरूप पर विचार करने से यह पता चलता है कि यह एक शुद्ध मनोविज्ञान या मौलिक विज्ञान है। इसका कारण यह है कि यह शुद्ध मनोविज्ञान अथवा भौतिक विज्ञान की शर्तों अथवा अभिधारणाओं को पूरा करता है। जैसे-

1 शुद्ध मनोविज्ञान की एक अभिधारणा या शर्त यह है कि इसमें विषय-वस्तु का अध्ययन व्यवस्थित रूप में किया जाता है। इस अध्ययन के लिए आवश्यकता के अनुसार प्रयोगशाला प्रयोग, क्षेत्र प्रयोग या क्षेत्र-अध्ययन का व्यवहार किया जाता है। शुद्ध मनोविज्ञान की विशेषता समाज मनोविज्ञान में भी पाई जाती है। यहाँ भी आवश्यकता के अनुसार क्षेत्र प्रयोग या क्षेत्र अध्ययन का व्यवहार करके सामाजिक विषयों या पटनाओं का विधिवत अध्ययन किया जाता है। इस आधार पर समाज मनोविज्ञान को शुद्ध मनोविज्ञान या मौलिक विज्ञान कहना युक्तिसंगत है।

2 शुद्ध मनोविज्ञान को दूसरी विशेशता यह है कि इसमें परिकल्पना या परिकल्पनाओं का निर्माण किया जाता है। किसी अध्ययन विषय के सम्बन्ध में कोई परिकल्पना बनाई जाती है। फिर विधिवत् अध्ययन के आधार पर उसकी जाँच की जाती है। सामान्य मनोविज्ञान एक शुद्ध मनोविज्ञान है। इसमें प्रेरणा से सम्बन्धित परिकल्पना बनायी जा सकती है कि सीखने के लिए दण्ड से पुरस्कार अधिक लाभदायक है। प्रयोग द्वारा इसकी जाँच की जा सकती है। अतः इस आधार पर भी समाज मनोविज्ञान वास्तव में शुद्ध मनोविज्ञान होने का सही दावा करता है।

3. शुद्ध मनोविज्ञान की तीसरी विशेषता यह है कि इसमें अध्ययनों के आधार पर प्राप्त परिणामों के आलोक में जब परिकल्पना सही प्रमाणित हो जाती है तो उसे सिद्धान्त के रूप में मान लिया जाता है। थॉर्नडाइक (1896) ने बिल्ली, चुहे आदि पशुओं पर प्रयोग करके इस परिकल्पना को प्रमाणित कर दिया कि सीखने का आधार तत्परता, अभ्यास तथा प्रेरणा है। अतः इससे सिद्धान्त के रूप में मान लिया गया। यह विशेषता समाज मनोविज्ञान में भी पाई जाती है। यहाँ भी परिकल्पना के सही प्रमाणित होने पर उसे सिद्धान्त के रूप में मान लिया जाता है। फेस्टिंगर मनुष्य पर प्रयोग करके इस परिकल्पना को प्रमाणित कर दिया कि संज्ञानात्मक असंवादिता के कारण मनोवृत्ति बदल जाती है। अतः इससे सिद्धान्त के रूप में मान लिया गया।

4. शुद्ध मनोविज्ञान की चौथी अभिधारणा या विशेषता यह है कि इसमें नियमों का निर्माण किया जाता है। जब भिन्न-भिन्न वैज्ञानिकों द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्त का प्रमाणीकण हो जाता है तो इसके एक नियम का रूप दे दिया जाता है। थार्नडाइक ने सीखने के तीन नियमों अर्थात् तत्परता नियम, अभ्यास-नियम तथा प्रभाव नियम का निर्माण इसी तरह किया। यह बात समाज मनोविज्ञान में भी है। यहाँ भी किसी सिद्धान्त के प्रमाणीकण के बाद उसे नियम का रूप दे दिया जाता है। जैसे संज्ञानात्मक असंवादिता सिद्धांत के प्रमाणीकरण के बाद फस्टिंगर ने चार नियमों का निर्माण किया-

(i) असंवादित संज्ञानों के बीच भिन्नता की मात्रा बढ़ने से असंवारिता की मात्रा बढ़ती है।

(ii) असंवादित के बीच भिन्नता की मात्रा बढ़ने से असंवादिता की मात्रा बढ़ती है

(iii) संवादी संज्ञानों की मात्रा बढ़ने से असंवादिता की मात्रा घटती है।

(iv) असंवादिता की मात्रा पर भिन्न-भिन्न संज्ञानों के महत्त्व का सार्थक प्रभाव पड़ता है।

स्पष्ट है कि समाज मनोविज्ञान में सभी अभिधारणाएँ, शर्ते या विशेषताएँ पाई जाती हैं। अतः समाज मनोविज्ञान वास्तविक अर्थ में शुद्ध मनोविज्ञान की एक शाखा है। इस अर्थ में यह सामान्य मनोविज्ञान, बाल- असामान्य मनोविज्ञान आदि शुद्ध म मनोविज्ञानों से अभिन्न तथा शिक्षा मनोविज्ञान औद्योगिक मनोविज्ञान आदि व्यावहारिक मनोविज्ञान से भिन्न है।

(ख) समाज मनोविज्ञान : एक व्यावहारिक एवं व्यवहारपरक मनोविज्ञान-समाज धान में एक उल्लेखनीय बात यह है कि यह एक ओर शुद्ध मनोविज्ञान है और दूसरी ओर व्यावहाकि मनोविज्ञान है व्यावहारिक मनोविज्ञान उसे कहा जाता है जिसमें व्यावहारिक समस्याओं का समाधान किया जाता है। इस प्रकार के मनोविज्ञान में भी है। सिद्धान्तों तथा नियमों के आलोक में मानव जीवन की विभिन्न व्यावहारिक समस्याओं का समाधान करके मानव जीवन को सुखद बनाने का प्रयास किया जाता है। व्यवहारिक मनोविज्ञान की यह विशेषता समाज मनोविज्ञान में भी है। इसका कारण यह है कि यहाँ सामाजिक वातावरण में मनुष्य की व्यावहारिक समस्याओं का सामना किया जाता है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। इसके कारण उसकी कई सामाजिक समस्याओं का समाधान किया जाता है। वह जिस समाज का सदस्य होता है, उसके प्रति उसके कुछ निश्चित कर्तव्य होते हैं। उसके कर्तव्यों को निभाने में समाज मनोविज्ञान सहायक होता है। मर्टन तथा निस्वेट (1961) ने कहा है कि समाज मनोविज्ञान का एक दायित्व व्यावहारिक सामाजिक समस्याओं का समाधान करना भी है। व्यावहारिक समस्याओं का तात्पर्य उस समस्याओं से है जिनका प्रभाव प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से समाज के सभी या अधिकांश व्यक्तियों पर पड़ता है। ऐसी समस्याओं के समाधान से समाज तथा व्यक्ति दोनों को लाभ पहुंचता है तथा दोनों की प्रगति में सहायता मिलती है। यदि इन समस्याओं का समाधान न हो तो दोनों का हानि पहुँचती हैं तथा प्रगति में बाधा पहुँचती है।

(ग) पारस्परिक क्रिया की विशेषताएं - सामाजिक मनोविज्ञान पारस्परिक क्रियाओं का विज्ञान है। सामाजिक परिस्थितियों में व्यक्तियों के बीच होनेवाले व्यवहारों को पारस्परिक क्रियाक कहते हैं। यह पारस्परिक क्रिया व्यक्ति तथा व्यक्ति के बीच, व्यक्ति तथा समूह के बीच, व्यक्ति तथा सामाजिक संस्थान के बीच और व्यक्ति तथा सम्पूर्ण समाज के बीच देखी जाती है। एक व्यक्ति अपने व्यवहार से दूसरे व्यक्ति को प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता है। दूसरा व्यक्ति पहले व्यक्ति के व्यवहार से प्रभावित होकर व्यवहार करता है। फिर पहला व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के व्यवहार पा प्रतिक्रिया से प्रभावित होकर कोई विशेष व्यवहार या प्रतिक्रिया करता है। अतः पहले तथा दूसरे के बीच होने वाली

इस क्रिया-प्रतिक्रिया को पारस्परिक क्रिया कहते हैं। इस पारस्परिक क्रिया की कई विशेषताएँ-

(i) पारस्परिक क्रिया की व्याख्या साधारण उत्तेजना प्रतिक्रिया सम्वन्ध के आधार पर सम्भव नहीं है। इसका कारण यह है कि उत्तेजना तथा प्रतिक्रिया के बीच कई मध्यवर्ती चर सक्रिय होते हैं। जैसे एक मुल्ला की उपस्थिति में हिन्दुओं तथा मुसलमानों में विभिन्न प्रतिक्रियाओं का उत्पन्न होना स्वाभाविक है। अतः पारस्परिक क्रिया की न्याख्या केवल उत्तेजना प्राणी-प्रतिक्रिया सम्बन्ध के आधार पर ही सम्भव है।

(ii) सामाजिक पारस्परिक क्रिया का आधार प्रत्याशा है। पहला व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति के प्रति एक विशेष प्रत्याशा के साथ कोई व्यवहार करता है। आगे चलकर पहले व्यक्ति के प्रति दूसरे व्यक्ति का व्यवहार कैसा होगा, यह पहले व्यक्ति के ऊपर उसको प्रत्याशा पर आधारित होता है। इस प्रकार पहले व्यक्ति तथा दूसरे व्यक्ति के बीच होने वाली पारस्परिक क्रिया का स्वरूप दोनों की प्रत्याशाओं तथा उनके व्यक्तिगत स्वरूप से निर्धारित होगा।

(iii) जब पहले व्यक्ति तथा दूसरे व्यक्ति एक-दूसरे के प्रति भविष्यवाणी करने में सफल होते हैं तो पारस्परिक क्रिया सरल बन जाती है, अन्यथा जटिल तथा कठिन बन जाती है। जैसे दो पुराने मित्रों के बीच पारस्परिक क्रिया सहल होती है, जबकि दो नये मित्रों के बीच यह कठिन होता है।

(iv) जब पहले व्यक्ति तथा दूसरे व्यक्ति के बीच समान समझदारी नहीं होती है तो भविष्यवाणी करना कठिन हो जाता है। फलतः दोनों के बीच पारस्परिक क्रिया सहज तथा स्वाभाविक नहीं बन पाती है, बल्कि जटिल एवं कठिन बन जाती है। जैसे- यदि पहला व्यक्ति यह समझकर अपने हाथों को दूसरे व्यक्ति की ओर बढ़ाये कि हाथ मिलाना अभिवादन का प्रतीक है, किन्तु दूसरा व्यक्ति इस अर्थ से परिचित न हो तो अवश्य ही पहले व्यक्ति का यह व्यवहार प्रभावहीन सिद्ध होगा। इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि हमारे सामाजिक व्यवहारों का नियंत्रण तथा संचालन हमारी परस्पर प्रत्याशाओं के आलोक में होता है।